भूमिका

भारतीय परंपरा में पहले संयुक्त परिवार का चलन था। सामाजिक स्तर पर संयुक्त परिवार की बड़ी ही अहम भूमिका थी, जिसका मुखिया परिवार का बुजुर्ग व्यक्ति होता था। वह अपने परिपक्व अनुभवों की दृष्टि से पूरे परिवार का संचालन करता था। तब पूरे परिवार में बुजुर्ग की एक खास अहमियत होती थी लेकिन जैसे-जैसे समय बदलता गया और जीवन-जगत में भौतिकतावाद हावी होता गया, वैसे-वैसे संयुक्त परिवार टूटते गए और उनकी जगह एकल परिवार बढ़ते गए। इसके साथ ही परिवारों में बड़े-बुजुर्गों की वह अहमियत भी ख़त्म होती गई। ज़ाहिर है इससे बुजुर्गों की ज़िंदगी में तमाम तरह की परेशानियाँ आने लगीं। भूमंडलीकरण के बाद उपजी परिस्थितियों के चलते पारिवारिक और सामाजिक मूल्य बिखरने लगे। सूचना-क्रांति के उपरांत आई आधुनिकता की आँधी ने परिवार और समाज को खासा प्रभावित किया। कभी परिवार के केंद्र में रहने वाला बुजुर्ग अब हाशिए पर और कहीं-कहीं हाशिए से बाहर तक आ गया। मतलब उपभोक्तावादी संस्कृति से उपजी सारी विसंगतियों के 'साइड इफैक्ट' वृद्धों को भी झेलने पड़े। उनके लिए सम्मान की भावना लोगों में समाप्त होने लगी और अपने घर में ही बुजुर्गों की उपेक्षा होने लगी। इस प्रभाव की असल मार मध्य वर्ग के वृद्ध पर पड़ती है, जिसकी मानसिकता अपनी परिस्थितियों के चलते पहले से ही दबी हुई है। ऐसे बुजुर्गों को अब आए दिन यही सुनना पड़ता है कि- 'यहाँ क्यों बैठे हो?' 'इतनी ज़ोर-ज़ोर से खाँस क्यों रहे हो?' 'बार-बार पानी क्यों माँगते हो? कभी चुप भी बैठ सकते हो? या फिर 'हमेशा' चीखते ही रहते हो'' इत्यादि।

अपनी एम.ए. की पढ़ाई के दौरान मेरा ध्यान बुजुर्गों की इन स्थितियों की ओर जाता रहता था। बड़े शहरों, महानगरों से लेकर छोटे कस्बों तक के बुजुर्गों के ऊपर तमाम जुल्म और संपत्ति के लिए उनकी हत्या तक की खबरें अब आम हो गई हैं। ये सारी बातें मुझे हमेशा से परेशान करती रही हैं।दिल्ली विश्वविद्यालय से एम. ए. के बाद

जब मैं ''अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा'' का कोर्स कर रही थी तो अपने परियोजना-कार्य के रूप में मैंने वरिष्ठ नागरिकों पर छपी एक पुस्तक के कतिपय अंशों का अनुवाद किया था। उस पुस्तक का अनुवाद करते हुए अपने आस-पास रह रहे बुजुर्गों की स्थिति पर मेरा विशेष ध्यान गया और वहीं से प्रेरित होकर मैंने सोचा कि आगे चलकर मैं अपने इसी कार्य को शोध के रूप में आगे बढ़ाऊंगी। जब एम. फिल. लघुशोध के लिए विषय-चयन की बात आई तो मैंने हिंदी कहानियों में बुजुर्गों की स्थिति जानने-समझने का निश्चय किया। और इस प्रकार मेरा शोध-विषय हुआ- **21वीं सदी की हिंदी कहानियों में बुजुर्ग पात्रों का अध्ययन (विशेष संदर्भ : सन 2000-2012)।**

चूंकि हर शोध की अपनी एक सीमा होती है, इसलिए प्रस्तुत शोध में भी 2000 से 2012 के बीच छपी 13 प्रमुख कहानियाँ चयनित की गई हैं। ये कहानियाँ हैं- कमलेश्वर की 'देवा की माँ', उदय प्रकाश की 'छप्पन तोले की करधन', एस.आर. हरनोट की 'बिल्लियाँ बतियाती हैं', जोगिन्दर पाल की 'दादियाँ', प्रियंवद की 'पलंग', अवधेश प्रीत की 'अन्यथा', ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'अम्मा', कुलबीर सिंह मलिक की 'सरजू बुड्ढा', स्वाति तिवारी की 'वैतरणी के पार', नीलाक्षी सिंह की 'रंगमहल में नाची राधा' , मनीषा कुलश्रेष्ठ की 'प्रेतकामना', कैलाश वानखेड़े की 'घंटी' और विमल चंद्र पाण्डेय की 'चश्में'। इन सभी कहानियों में वृद्ध पात्रों की अलग-अलग विविध छवियाँ और उनके कार्यकलाप देखने को मिलते हैं। कहानियों के चयन में जहाँ कमलेश्वर, उदय प्रकाश, एस.आर.हरनोट, प्रियंवद, ओमप्रकाश वाल्मीकि, जोगिन्दर पाल जैसे वरिष्ठ कथाकारों की कहानियाँ ली गई हैं, वहीं मनीषा कुलश्रेष्ठ, नीलाक्षी सिंह, कैलाश वानखेड़े और विमल चंद्र पाण्डेय जैसे नए कहानीकारों की कहानियाँ भी शामिल की गई हैं। बुजुर्गों पर बहुत-सी कहानियाँ लिखी गई हैं और अभी भी लिखी जा रही हैं लेकिन इन 13 कहानियों में अलग-अलग रूप और परिस्थितियाँ देखने को मिलती हैं।

प्रस्तुत लघु-शोध प्रबंध में कुल तीन अध्याय है। पहला अध्याय है- *"हिंदी कहानी और बुजुर्ग पात्र"* इस अध्याय में संक्षिप्त रूप में हिन्दी कहानी के उद्भव और विकास की चर्चा की गई है और उसके बाद कथा सम्राट प्रेमचंद युग से अब तक कहानियों में कहाँ-कहाँ बुजुर्ग पात्र किस-किस रूप में आए हैं, इसको दिखाया गया है।

दूसरा अध्याय है- *"चयनित कहानियों में बुजुर्ग पात्रों का वर्गीकरण।"* इस अध्याय के दो उप-अध्याय हैं। इसमें दो आधारों पर बुजुर्गों का वर्गीकरण किया गया है- पहला लिंग के आधार पर। इसमें बुजुर्ग को स्त्री और पुरुष दो वर्ग में विभाजित किया गया है। परिवार व समाज में दोनों की स्थिति व उनके प्रयासों को देखा गया है,जहाँ पुरुष विपरीत स्थिति से लड़ते नजर आए हैं, वहीं स्त्री भी उनसे कम नहीं दिखती है और वह परिस्थितियों का डटकर सामना करती है। कहीं–कहीं स्त्री पात्र, पुरुष से भी अधिक मजबूत नजर आए हैं। दूसरे उप-अध्याय में *'अर्थ'* के आधार वृद्धों की स्थिति चयनित कहानियों के माध्यम में देखा गया है। यहाँ उच्च ,मध्य ,निम्न तीनों प्रकार की आर्थिक स्थिति से संबंधित वृद्धों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें अर्थ की कमी ही नहीं बल्कि अर्थ की अधिकता की वजह से बुजुर्गों के लिए उपजी समस्या का चित्रण किया गया है।

तीसरा अध्याय है- *"चयनित कहानियों में बुजुर्ग पात्रों की समस्याएँ।"* इस अध्याय में कहानियों के आधार पर चार समस्याओं से संबंधित उप-अध्याय बनाए गए हैं। ये उप-अध्याय हैं- *पारिवारिक समस्याएँ, सामाजिक समस्याएँ, आर्थिक समस्याएँ और मनोवैज्ञानिक समस्याएँ।* ये चारों समस्याएँ एक दूसरे से आपस में जुड़ी हुई हैं। पहले उप अध्याय *"पारिवारिक समस्याएँ"* में व्यक्ति की एक उम्र के बाद जब वह ज़िंदगी की आखिरी सीढ़ी पर होता है तो किस प्रकार उसके अपने परिवार में ही उसका महत्व कम हो जाता है, इस पर दृष्टि डाली गई है। जिस परिवार को ताउम्र जो व्यक्ति गढ़ता है और अंतिम समय में वही परिवार उसकी उपेक्षा करता है, ऐसे में वह बुजुर्ग कैसे सामना करता है और ज़िंदगी जीता है, इन सब का अध्ययन इस अध्याय

में किया गया है। दूसरे उप अध्याय *"सामाजिक समस्याएँ"* के अंतर्गत हिंदी कहानियों में चित्रित समाज में बुजुर्गों की स्थिति व उनकी उपेक्षा के मूल कारणों पर नजर डाली गई है। समाज के साथ कोई वृद्ध आदमी या औरत कैसे सामंजस्य बैठाती है, यह सब देखा-समझा गया है। तीसरे उप अध्याय में बुजुर्गों की *''आर्थिक समस्याएँ''* यानि धन की कमी व उसकी अधिकता के कारण पैदा हुई परेशानियों के कारण उनकी अपनी ज़िंदगी पर क्या प्रभाव पड़ रहा है, इसे सामने रखा गया है। आज के आपाधापी और स्वार्थपरक समय में पैसा अक्सर रिश्तों के बीच आ जाता है।हिंदी कहानियों में बुजुर्ग कैसे इसका खामियाजा भुगत रहे हैं, इसका विश्लेषण किया गया है। चौथा उप अध्याय है-*"मनोवैज्ञानिक समस्याएँ"* है। इसमें कहानियों में अलग अलग स्थितियों के कारण बुजुर्गों में पैदा हुई मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर चर्चा की गई है तथा इन समस्याओं के कारण उनके जीवन में आए बदलावों पर प्रकाश डाला गया है।

लघु शोध-प्रबंध के अंत में *'उपसंहार'* के अंतर्गत शोध के निष्कर्ष को दिया गया है।